''श्री छत्रसाल जी महाराज – एक दर्शन ''

प्राक्कथन

भारत के मध्य प्रदेश का बुन्देलखण्ड–यहाँ का अतीत बहुत ही ऐतिहासिक और गौरवमयी रहा है, क्योंकि यहीं पर 28वें कलियुग में प्रगट होने वाले एक पारब्रह्म, अक्षरातीत, आखिरूलजमा ईमाम मेंहदी श्री प्राणनाथ जी ने श्री पद्मावती पुरी धाम पन्ना को अपनी राजधानी बनाया था, और उन्हें यहीं पर ही ऐसे महाबाहुबलि, पराक्रमी और अमीरूल मोमिन महाराजा श्री छत्रसाल जी मिले, जिन्होंने जागनी के कार्य में खुद को स्वामी जी पर तन, मन, धन से न्यौछावर कर दिया था। ऐसे ही अमीरूल मोमिन श्री छत्रसाल जी महाराज का जीवन दर्शन इसमें सम्मिलित किया गया है। इतिहास साक्षी है कि यहीं केवल एक मात्र राजा ऐसे थे, जिन्होंने उस समय औरंगजेब के साथ 252 लड़ाईयां लड़ीं और सब पर जीत हासिल कर बुन्देलखण्ड रूपी विशाल राज्य की स्थापना की। राज्य के बच्चे–बच्चे के मुँह से यही शब्द निकलते थे ।

''छत्ता तेरे राज पर, धक धक धरती होय ।
जित-जित घोड़ा मुँह करे, तित तित फत्ते होय ।।
इत जमुना उत नर्मदा, इत चम्बल उत टौंस ।
छत्रसाल सों लरन की, रही न काहूँ हौंस ।। ''

जन्म

भारत माता का वक्षः स्थल माने जाने वाला बुन्देलखण्ड, जहाँ पर ऊँचे नीचे पहाड़, जंगल, पत्थरों से भरी जगह–मगर फिर भी पूरे ब्रह्माँड में यहीं एक खास जगह जहाँ पर श्री छत्रसाल जी महाराज का जन्म हुआ था।

श्री चम्पतराय और उनकी तीसरी पत्नी लाड़कुँवरी (जिसे सब लोग प्यार से सारन्धा कहकर पुकारते थे) दोनों शाहजहाँ की आँखों में खटक रहे थे। मुगल सेना चप्पे–चप्पे पर इनका वध करने के लिए इन्हें खोज रही थी और रानी पेट से थी। मगर फिर भी इन्होंने हिम्मत नहीं हारी। चम्पत–दम्पत्ति ने एक सुरक्षित स्थान चुना जो झाँसी से पूर्व कंकर कंचनहार की पहाड़ी पर था, वहीं पर रानी सारन्धा को

प्रसव पीड़ा शुरू हुई। तभी वहां पर एक नेवला आया और रानी के निकट पांच स्वर्ण मोहरें रखकर विलीन हो गया ।

''रानी के उदर मांझ भई जब गर्भपीर,
होय के अधीर लगी कृष्ण को मनावने ।
इतने में आय एक न्योला धर गयो लाय,
रानी के निकट पांच मुहरें दृग सामने ।।''

ज्येष्ठ शुक्ला तृतीयः वि. सं. 1706 (1649 ई०) सोमवार को उस पहाड़ी पर रानी सारन्धा की कोख से गोधूलि बेला में बहुत ही सुन्दर बालक ने जन्म लिया। मुगल सेना तो उन्हें ढूँढ ही रही थी,तभी मुगल सेना ने चम्पत–दम्पति पर आक्रमण कर दिया। दम्पति के साथ कामिनी नाम की दायी भी थी। चम्पत राय जी ने आव देखा न ताव, बच्चे को गोद में लिया, रानी को कंधे पर चढ़ा कर और कामिनी (दायी) की बाँह पकड़कर पहाड़ी से छलाँग लगा दी और बच निकले। चम्पतराय जी ने ऐसी छलाँग लगाई मानो कोई मोर उड़कर दूसरी जगह पर जा रहा हो। इसी वजह से ककरकंचनहार पहाड़ी का नाम मोर–पहाड़ी पड़ गया ।

''रानी ले कन्धे चढ़ाय, पुत्र को हिये लगाय,
झपट कामिनी की बाह गही धाय के,
मार के छलांग अधर कूद चले चम्पतराय,
मोर की पहाड़िया से गये मोर से उड़ाय के।। ''

बालक की कुण्डली दैलवाड़ा के ज्योतिषी बरवतबली ब्रह्म भट्ट जी ने बनाई थी, और नामकरण पर उनका नाम छत्रसाल रखा गया ।

श्री छत्रसाल जी का लालन पालन रानी सारन्धा बड़े ही लाड़ और प्यार से करने लगी। छत्रसाल जी की प्रवृत्ति जानने के लिए उनके सामने बहुत सारी चीज़ें रखी गयी पर उन्होंने तलवार को ही स्पर्श किया। मुगलों का आक्रमण दिन–प्रतिदिन होता ही रहता था। रानी सारन्धा तब छत्रसाल जी को अपनी पीठ पर बाँध कर युद्ध भूमि में युद्ध लड़ने के लिए जाया करती थी। जब छत्रसाल जी चार वर्ष के थे, तो रानी उन्हें ननिहाल छोड़ आई थी। क्योंकि मुगलों के आक्रमण की वजह से वोह छत्रसाल जी को समय नहीं दे पा रही थी। वहाँ पर दस वर्ष की आयु तक

पहुँचते पहुँचते छत्रसाल जी ने अस्त्र–शस्त्र चलाने में निपुणता हासिल कर ली।

घटना

वि.सं. 1717 (1606 ई०) में एक दिन छत्रसाल जी घोड़े पर बैठे जा रहे थे, तब उन्होंने देखा कि कुलदेवी विन्ध्यवासिनी के मन्दिर के बाहर कुछ मुगल सैनिक, भक्तों से अभद्र व्यवहार कर रहे थे। यह देखकर उनसे रहा न गया। उनका खून खौल उठा और वे मुगल सैनिकों पर टूट पड़े। सबके सब उनके हाथों मारे गए। सब भक्तगण छत्रसाल जी का जयघोष करने लगे। यह घटना जब चम्पतराय जी को पता लगी तो उन्होंने छत्रसाल जी को आर्शीवाद दिया और कहा कि बेटे बुन्देलखण्ड के स्वराज्य का सपना अब तुम्हारे जिम्मे है और अब तुम ही हमारी यह ईच्छा पूरी करोंगे।

माता–पिता का वियोग

जब छत्रसाल जी की साढ़े बारह वर्ष की आयु हुई तो उन्हें अपने माता–पिता का वियोग सहन करना पड़ा। सम्वत् 1718, नवम्बर 1661 ई० को चम्पत–दम्पति मुगलों के साथ युद्ध करते –करते वीरगति को प्राप्त हुए। मुगलों के हाथों मरने से अच्छा उन्होंने खुद को ही शहीद कर दिया। इस आक्रमण के पीछे भी उनके अपनों ने ही उनके साथ विश्वासघात करके मुगलों के साथ मिलकर षडयन्त्र रचा था। जिसके फलस्वरूप चम्पत–सारन्धा को वीरगति को प्राप्त होना पड़ा। छत्रसाल जी को जैसे ही अपने माता–पिता का यह दुखद समाचार प्राप्त हुआ उनके अन्दर मुगलों के प्रति नफरत रोम रोम में भर गई। फिर छत्रसाल जी ने सहारा से मोरनगाँव आकर माता–पिता का अन्तिम संस्कार किया। सब संस्कार वैदिक रूप से सम्पन्न करवाए गए। छत्रसाल जी अपने आपको बहुत उदास और अकेला महसूस कर रहे थे।

अपने माता–पिता का वियोग उनसे सहन नही हो रहा था और वह बीमार पड़ गए। गाँव के पास ही एक पेड़ के नीचे बैठ गए। वहीं से गांव के बरदीया कुम्हार और उनकी बेटी गुजर रही थी, जिसने छत्रसाल जी को पहचान लिया और अपने घर ले आई और उनकी

सेवा सगी बहन से भी बढ़कर की। जब छत्रसाल जी पूरी तरह से ठीक हो गए, तो वोह अपने जेठे भाई अंगदराय के पास देवगढ़ पहुँचे। अंगदराय जी ने उन्हें ढाढस बंधाया। छत्रसाल जी ने उन्हें बताया कि औरंगजेब के खौफ के कारण सभी सगे सम्बन्धियों ने उनसे रिश्ता तोड़ दिया है। कुल पुरोहित तक ने भी उन्हें दुत्कार दिया और सहोदर बहन मान कुँवरी ने भी मुगलों के डर के कारण अपने घर के दरवाजे उनके लिए बंद कर दिए हैं।

संघर्षमयी समय

माता–पिता की मृत्यु के बाद छत्रसाल जी के अगले 9 वर्ष बहुत ही संघर्ष में बीते। यह समय था वि.सं. 1718–1727 (1661 ई० – 1671 ई०)। मुगलों के प्रति विद्रोह की भावना मन में कूट कूट कर भर गई थी। उल्टा छत्रसाल जी को ही समझा बुझा कर शान्त कर दिया जाता। इसी बीच भाई अंगदराय जी ने उनका विवाह वैसाख शुक्ल तृतीयाः वि. सं. 1722 में पवार कुल की सुकन्या देवकुँवरि से कर दिया। देवकुँवरि का छत्रसाल जी से सम्बन्ध उनके पिता चम्पतराय जी ने मरने से पहले ही तय कर दिया था। रानी देवकुँवरि भी छत्रसाल जी की भान्ति ही मुगलों के खिलाफ रणभूमि में जाकर अपने पति का साथ दिया करती थी। अंगदराय और छत्रसाल जी ने फिर मिलकर सोचा कि मुगल सेना तो बहुत बड़ी है अगर उनको हराना है तो कुछ युद्ध के भेद और मुगलों की कमजोरियाँ क्या हैं ; यह सब पता लगानी होगी और यह सब तो उनके साथ उनके बीच में रह कर ही मुमकिन हो सकता है। ऐसा सोच कर वह राजा जयसिंह के पास गए और उनकी सेना में शामिल हो गए। क्योंकि राजा जयसिंह मुगलों के साथ मिला हुआ था। राजा जयसिंह को भी छत्रसाल जी की वीरता पर कोई संदेह नहीं था। छत्रसाल जी को भी अपनी मनचाही मुराद मिल गई।

देवगढ़ विजय वि. स. 1724 (1667 ई०)

देवगढ़ का विशाल दुर्ग राजा कूरम मल्ल के हाथों में था। औरंगजेब ने राजा जयसिंह को इस विशाल किले को जीतने के जिम्मेदारी सौंपी। राजा जयसिंह ने आगे सेनापति बहादुर खाँ को किला फतह करने के लिए भेजा। कई

महीनों तक बहादुर खाँ ने किले की घेराबंदी की मगर अन्दर जाने का रास्ता उसे न मिला। बहुत सारी रणनीतियाँ बनाई गईं पर सारी व्यर्थ गईं। अप्रैल सन् 1667 को बहादुर खाँ अपनी फौज के साथ गया, मगर सितम्बर 1667 सन् तक उसको कोई कामयाबी नहीं मिली। तब छत्रसाल जी वहाँ पर एक छोटी मुगल सेना की टुकड़ी लेकर पहुँचे। छत्रसाल जी को देखकर तो बहादुर खाँ की खुशी का ठिकाना ही नहीं रहा। फिर छत्रसाल जी ने अपनी रणनीति तैयार की। पहले दिन किले के बाहर से चारों ओर उसका निरिक्षण किया। उन्हें रात्री में एक चोर रास्ता दिखाई दिया। बस फिर क्या था छत्रसाल जी ने वहीं से आक्रमण किया और किले के अन्दर घुस गए। भयानक युद्ध हुआ और आखिर में छत्रसाल जी ने किले को अपने कब्जे में ले लिया। सब जगह जब छत्रसाल की जय–जयकार होने लगी। परन्तु विजय का सेहरा बहादुर खाँ ने अपने सिर पर ले लिया। इस छल की नीति से छत्रसाल जी के मन में मुगलों के प्रति ओर ज्यादा घृणा पैदा हो गई और फिर उन्होंने मुगल सेना को छोड़ने का निर्णय ले लिया। करीब एक वर्ष तक उन्होंने सारी युद्ध नीतियां और मुगलों की कमजोरियाँ भी जान ली थी। अतः देवगढ़ विजय उपरान्त उन्होंने मुगलों का शिविर छोड़ दिया और दक्षिण की ओर शिवाजी से मिलने के लिए चल पड़े।

शिवा–छत्ता मिलाप वि.सं. 1724 (1667 ई०)

अगहन सुदी, 5 गुरूवार सम्वत् 1724 को छत्रसाल जी का शिवाजी से मिलन हुआ। शिवा जी को गुप्तचरों द्वारा पहले ही पता चल गया था कि छत्रसाल जी उनसे मिलने आ रहे हैं। शिवा जी ने बहुत ही आदरभाव से इनका स्वागत किया और कुशलता पूछी। छत्रसाल जी ने शिवाजी के आगे अपने मन की सारी व्यथा कह सुनाई कि मैं अपने मातृभूमि बुन्देलखण्ड को मुगलों की गुलामी से स्वतन्त्र कराना चाहता हूँ। शिवा जी ने उन्हें उनकी इच्छा पूरी होने का आश्वासन दिया और कुछ महीने अपने पास रखा। छत्रसाल जी साढ़े अठारह वर्ष के हो चुके थे। इन्हीं महीनों में छत्रसाल जी ने शिवाजी से रणभूमि की रणनीतियों की बहुत सारी महत्वपूर्ण जानकारियां भी ले ली। शिवाजी ने छत्रसाल को कहा कि अब तुम में चक्रवर्ती सम्राट बनने के सभी लक्षण हैं। यह लो मेरी भवानी तलवार मैं तुम्हे भेंट करता हूँ , जाओ अपने आत्मबल और विश्वास से मुगलों के दांत खट्टे करके, अपने स्वराज्य

बुन्देलखण्ड को गुलामी से बचाओ। छत्रसाल जी ने उनसे आर्शीवाद लेकर वहाँ से बुन्देलखण्ड की तरफ रवानगी की।

'' शक्ति हमारी सदा तुम्हारे साथ रहेगी - हिम्मत बांधो ।
स्वयं शत्रुओं को तुम अपने - बुन्द देश से शीघ्र भगा दो ।।
छत्रसाल का तेज चमक, क्षण भर में दूना हो आया ।
फड़का दाया हाथ शस्त्र को, वीर वती ने शीश झुकाया।।''

बुन्देलखण्ड वापसी वि.स. 1725 (1668 ई०)

सन् 1668 को छत्रसाल जी शिवाजी से आर्शीवाद लेकर बुन्देलखण्ड वापिस आ गए। वापिस आकर सबसे पहले छत्रसाल जी ने ऊँची नीची पहाड़ियों, कन्दराओं तथा वनों का सर्वेक्षण किया और मुगलों के ठिकानों का भी बारीकी से अवलोकन किया। छत्रसाल जी ने धीरे धीरे लोगों में स्वतन्त्रता की जागृति पैदा करनी शुरू कर दी। धीरे–धीरे लोगों को अपने साथ जोड़कर हमजोली साथियों की टोली भी तैयार कर ली और वहीं पहाड़ियों में प्रशिक्षण कैम्प लगाकर लोगों को अस्त्र शस्त्र की शिक्षा देनी शुरू कर दी। करीब दो बरस के बाद सन् 1670 को औंरगजेब ने फिदाई खाँ को ओरछा के मन्दिर तोड़ने के लिए भेजा। उस समय ओरछा की गद्दी पर बूढ़े महाराजा सुजानसिंह आसीन थे। संकट में घिरे होने के कारण उन्होंने छत्रसाल जी को बुलवा कर उनके आगे सहायता की गुहार लगाई। जिसे छत्रसाल जी ने सहर्ष स्वीकार किया।

महाराजा सुजानसिंह जी ने छत्रसाल जी को रणकर्कशा नामक तलवार भेंट करके उन्हें विजयी होने का आर्शीवाद देकर धूमघाट की तरफ युद्ध करने के लिए रवाना किया। धूमघाट में छत्रसाल जी फिर मुगलों की सेना पर टूट पड़े और युद्ध भूमि में अपना ऐसा रणकौशल दिखाया कि जिस कारण फिदाई खाँ को मुँह की खाकर वापिस लौटना पड़ा। धूमघाट की विजय के बाद छत्रसाल जी मऊ सहानियां, मऊ महेवा में रहने लगे और फिर वहीं पहाड़ियों में सेना तैयार करके उन्हें प्रशिक्षण देने लगे। फिर भी छत्रसाल जी हमेशां अन्दर ही अन्दर सोचते रहते थे कि काश!! शिवाजी के गुरू की तरह उनका भी कोई गुरू होता जो उनका मार्ग दर्शन करता। ऐसे समय में ही श्री प्राणनाथ जी ने उन्हें स्वपन में दर्शन दिए और कहा कि मैं जल्द ही तुम्हें

मिलूँगा और अपनी पेहेचान के वास्ते श्री प्राणनाथ जी ने अपनी छाप का एक सिक्का छत्रसाल जी को दे दिया। बस फिर क्या था श्री प्राणनाथ जी का आर्शीवाद उन्हें क्या मिला, उनके अन्दर तो जैसे कोई दिव्य शक्ति प्रवेश कर गई थी। 12 वर्ष तक सम्वत् 1727 से सम्वत् 1739 तक मुगलों के साथ बहुत सारी लड़ाईयां लड़ी। जिनमें मुगलों को मुँह की खानी पड़ी। छत्रसाल जी की ख्याति दिन प्रतिदिन औरंगजेब के दरबार में भी बढ़ने लगी। हर बार मुँह की खाये औरंगजेब ने छत्रसाल जी के दमन के लिए दो–दो, तीन–तीन सिपाहसलारों को एक साथ युद्ध करने के लिए बुन्देलखण्ड भेजा। कई अभियान भी चलाए। मगर हर बार उसे पराजय का मुँह ही देखना पड़ा।

12 वर्ष में लड़े युद्ध

फिदाई खां से युद्ध सम्वत् 1728, सैदद बहादुर खां से युद्ध सम्वत् 1729, खालिक खां से युद्ध सम्वत् 1729, फौजदार मुहम्मद खां से युद्ध सम्वत् 1730–33, मुहम्मद हाशिन खां से युद्ध सम्वत् 1730–33–35–37 रूहिल्ला खां से युद्ध सम्वत् 1730–33–34, मुनउवर खां से युद्ध सम्वत् 1733, करमईलाही से युद्ध सम्वत् 1735, खान दिलावर से युद्ध सम्वत् 1735, दाराबखां से युद्ध सम्वत् 1735, तहब्बर खां से युद्ध सम्वत् 1734–35, लतीफ खां से युद्ध सम्वत् 1733 में दो बार, 1737 में दो बार, अब्दुल हमीद सम्वत् 1737, अफ्रासियाव खां (रूमी) सम्वत् 1737 मिर्जा सदरूद्दीन सम्वत् 1737, हामिद खां सम्वत् 1737, अब्दुल समद सम्वत् 1737, वहलोल खां सम्वत् 1737,दलेल खाँ सम्वत् 1738;मोराद खाँ सम्वत् 1738;इखलाख खाँ सम्वत् 1739; बसालत खां सम्वत् 1739, मुहम्मद अफजल सम्वत् 1739, शमशेर खां सम्वत् 1739, शेख अनवर सम्वत् 1739, शेर खां सम्वत् 1739, शेर अफगन खां सम्वत् 1739 ।

श्री प्राणनाथ जी और श्री छत्रसाल जी मिलाप

एक परमात्मा, ईमाम मेंहदी, धाम के धनी अक्षरातीत श्री प्राणनाथ जी विः संः 1739 में जबलपुर के पास अपनी जागनी यात्रा करते हुए गढ़ा में पहुँच चुके

थे। वहीं पर सूरत सिंह ने श्री प्राणनाथ जी की पहचान कर उन पर ईमान ले आया और तारतम ले लिया। वाणी चर्चा सुन कर उसके अन्दर ऐसे खलबली मच गई कि वोह किसे अपनी बात बताए। सूरतसिंह सीधा श्री छत्रसाल जी के भतीजे दीवान देवकरन जी के पास आए और श्री प्राणनाथ जी के बारे में उन्हें बताया कि आप मेरे साथ चलो वोह केतकी नदी के किनारे बैठे हैं। स्वामी जी के दर्शन पाकर देवकरन धंन धंन हो गए। स्वामी जी के मुखारबिंद से वाणी चर्चा सुनकर उनके मन की सारी शँकाएं दूर हो गईं और ईमान ले आए। देवकरन जी मन ही मन सोचने लगे कि हो न हो छत्रसाल जी को 12 बरस पहले जिसने दर्शन दिए थे वोह यहीं श्री प्राणनाथ जी ही हैं। उन्होंने श्री जी से बात की तो श्री जी ने तुरन्त उन्हें छत्रसाल जी के पास अपना समाचार देने का हुक्म दिया। देवकरन जी छत्रसाल जी के पास मऊ आए और उन्हें श्री प्राणनाथ जी के आने का समाचार सुनाया। उनकी सारी पहचान बताई कि श्री जी वहीं विजयाभिनन्द,बुद्ध निष्कलंक अवतार हैं जिनकी आप 12 बरस से राह देख रहे हैं। महाराजा छत्रसाल जी में परमधाम की आत्म का अंकूर था, अपने धामधनी श्री प्राणनाथ जी का सन्देश सुनते ही आत्म व्याकुल हो उठी। मन में श्री जी को बुलाने का विचार ही कर रहे थे कि इतने में लालदास जी और उत्तमदास जी भी मऊ पहुँच गए। लालदास जी से छत्रसाल जी ने जब श्री मुखवाणी और वेदों की चर्चा सुनी,तो अन्दर से तुरन्त आत्म जाग्रत हो गई और स्वामी श्री प्राणनाथ जी के दर्शन पाने हेतु अधीर हो उठी। पर उन्होंने देवकरन से कहा '' देवकरन ! शेख अफॅगन खाँ की मुहिम जोरों पर है, बहुत खतरा है, कहीं निकल नहीं सकते। तुम लालदास जी और उत्तमदास जी के साथ जाओ और श्री जी को यहीं मऊ में ले आओ। मैं उनके यहां पधारने पर स्वयं उनके स्वागत के लिए हाजिर रहूँगा।''

''श्री जी साहिब जी को बुलावने,जाओ देव जी तुम।
लाल उत्तम को ले जाओ,सामे आए बुलावन हम।।''

स्वामी जी छत्रसाल जी का सन्देश पाकर गढ़े से अगरिया होते हुए सब सुन्दरसाथ के साथ पन्ना आए। वहीं अपना नूरी झण्डा लगाया, और किलकिला नदी के घाट पर डेरा लगा कर बैठ गए। तब श्री जी ने छत्रसाल जी को कहलवा भेजा कि हम यहाँ आ गए हैं। तब छत्रसाल जी ने फिर विनती भरा सन्देश भिजवाया कि हे धनी ! मैं इस समय मऊ को छोड कर वहाँ नही आ सकता। औरंगजेब की फौजों के सिपाहसलार अफॅगन खाँ ने

80 हजार की सेना लेकर मऊ को घेर रखा है। अपार मेहर करते हुए आप ही मऊ पधारिए। फिर स्वामी जी महिला सुन्दरसाथ को वहीं छोड़, छड़े–छड़े सुन्दरसाथ को लेकर मऊ आ गए, और तिदुन्नी दरवाजे के सामने डेरा डाल दिया। छत्रसाल जी पहली बार भेष बदल कर आए और दर्शन करके चले गए। फिर दूसरी बार शिकारी का भेष बना कर आए। स्वामी जी और सुन्दरसाथ को देखा और उनसे थोड़ा दूर सामने जाकर अनाड़ी, अन्जान व्यक्ति की तरह खड़े हो गए, और जोर से बोले,––''बाबा जू राम राम''। तब श्री जी ने कहा,–''हे बाबा! तुम आगे आकर बैठो।'' छत्रसाल जी थोड़ा सा आगे खिसके, स्वामी जी ने फिर भी और आगे बुलाया और कहा कि ''अब तो तुम हमारे फँद में फँस गए हो, यहां से भाग कर कहाँ जाओगे।'' तब श्री छत्रसाल जी ने कहा कि,''हे बाबा! इस ब्रह्माँड में कोई पैदा ही नही हुआ है जो मुझ पर फँदा डाले। यह काम तो केवल विजियाभिनन्द बुद्ध जी ही कर सकते हैं। मैं उनका बारह बरस से सेवक हूँ। उनकी छाप की मोहर का रुपया आज भी मेरे पास है जो मैं हर समय गले में पहने रखता हूँ।'' तब श्री जी ने कहा कि,''आओ इस जैसे और रुपए मेरे पास देखो।'' श्री जी ने अपना दाहिना घुटना ऊपर करते हुए कहा कि बिछे हुए बिछौने को उठा कर देखो। उठाया तो देखा उसी छाप के ढेरों रुपए नीचे रखे थे। तब छत्रसाल जी को यकीन हो गया कि यहीं मेरे धाम के धनी हैं, और उनके चरणों में गिर पड़े।

शेर अफॅगन खाँ के साथ युद्ध

उधर उसी समय औरंगजेब की सेना के सिपाहसलार अफॅगन खाँ ने 80 हजार सिपाहियों की सेना को लेकर मऊ को चारों तरफ से घेर कर आक्रमण कर दिया। श्री छत्रसाल जी ने श्री जी के चरणों में प्रणाम किया और कहा कि हे मेरे धनी ! शायद यह मेरा पहला और आखिरी प्रणाम होगा। क्योंकि शत्रुओं की सेना 80 हजार की सुनी है और मेरे पास केवल 500 योद्धा ही रण–युद्ध के लिए हैं। तब आप धाम के धनी श्री प्राणनाथ जी ने अपने सिर का रुमाल श्री छत्रसाल जी को पहनाकर आर्शीवाद दिया कि जाओ छत्रसाल! धनी की मेहर से विजय आपकी ही होगी।

''श्री राज रुमाल लेय के,सिर पर धरा महाराज।
हाथ धरा सिर उपर,होए पूरन मनोरथ काज।।''

जिस तलवार से श्री छत्रसाल जी ने युद्ध करना था, श्री प्राणनाथ जी ने उसे अपने हाथ में लेकर मेहर की नजर से देखा और कहा कि यह लो तलवार, इससे तुम युद्ध करना पर इससे किसी का खून न करना। इस पर जब सूर्य की किरणें पड़ेंगी तो सारे शत्रु अपने ही साथीयों को तुम्हारी सेना समझ कर आपस में ही कट मरेंगे। छत्रसाल जी ने युद्धभूमि में बिल्कुल वैसा ही किया। साँयकाल तक अफॅगन खाँ की 80 हजार की फौज आपस में ही कट मरी, और श्री छत्रसाल जी की विजय हुई।

मऊ से पन्ना

स्वामी श्री प्राणनाथ जी मऊ से पन्ना वापिस आ गए थे। छत्रसाल जी का परिवार चौपड़ा की हवेली में रहता था। सब परिवार वालों ने श्री जी के दर्शन अमराई घाट पर किए। बड़ी रानी ने तो मऊ में ही श्री जी के दर्शन कर लिए थे। मगर मंझली रानी ने यहीं अमराई घाट पर उनके दर्शन कर, वाणी चर्चा सुन कर तारतम ले लिया था। छत्रसाल जी भी मऊ से पन्ना आए तो अमराई घाट के सब सुन्दरसाथ के सामने श्री जी के चरणों में दण्डवत प्रणाम किया। दोपहर का समय था, श्री जी ने भोजन आरोगा और छत्रसाल जी ने उनका प्रशााद ग्रहण किया, और श्री जी के चरणों में अपने को एक अंगना मान कर पतिव्रत भाव से समर्पित होकर श्री जी की सेवा की। छत्रसाल जी ने जब अपने निवास स्थान चौपड़े की हवेली में श्री प्राणनाथ जी को पधराया तो अमराई घाट से उन्हें पालकी में बिठाकर खुद अपने कंधों पर पालकी उठा कर हवेली तक लेकर आए। जैसे ही श्री जी ने बाईजूराज जी के साथ पालकी से नीचे कदम रखा, मंझली रानी ने तुरन्त उनके आगे बड़ा प्रेमभाव लेकर अपनी साड़ी का पाँवड़ा कर दिया। मगर छत्रसाल जी ने साड़ी उठाकर अपनी पाग को बिछा कर पाँवड़ा कर दिया। पाग का पाँवड़ा छोटा पड़ गया। पुन; फिर रानी की साड़ी का पाँवड़ा भी बिछाना पड़ा। तब श्रीजी सिघाँसन पर आकर विराजमान हो गए।

अमीरुल मोमिन का खिताब

छत्रसाल जी के चाचा बलदीवान और दरबारियों में कुछ गुस्से की भावना आ गई कि छत्रसाल जी ने रीति के विरुद्ध जाकर कार्य किया है। एक तो श्री जी का झूठन खाते थे ,दूसरा अपने सिर की पाग बिछा दी, तीसरे रानी की साड़ी भी। यह सब उनको अच्छा नहीं लगा और जनता में भी कानाफूसी होने लगी। तब छत्रसाल जी ने बड़े प्रेम से सबको समझाया कि,

''पूर्ण ब्रह्म ब्रह्म से न्यारे, आनन्द अखण्ड अपार।।''

''मेरे घर में पूर्णब्रह्म, अक्षरातीत, सच्चिदानन्द जो क्षर और अक्षरब्रह्म से भी परे हैं, न्यारे हैं, सदा सत सुख और अखण्ड आनन्द के देने वाले हैं,,वो,,,ह पधारे हैं। न तो यह मेरे गुरु हैं, न ही मैं इनका चेला हूँ। क्योंकि गुरु और चेले का सम्बन्ध शरीर से होता है। यह तो मेरे आत्म के धनी श्री राज जी महाराज हैं। शिवसनकादिक आदिकाल से इनकी चरण धूलि की इच्छा रखते हैं। मगर त्रिदेवा, आदिनारायण कोई भी इनकी पारावार नही पा सके। सब इन्हें खोज खोज कर थक हार कर बैठ गए। मेरे इस तन के अन्दर भी उनकी एक आत्म होने के कारण से मैं उनकी मूल परमधाम की अंगना हूँ, और यह मेरे धाम के दूल्हा हैं। हमारा अखण्ड का नाता है। अपने साथ श्री स्यामा महारानी सरुप श्री ठकुरानी जी को और सुन्दरसाथ को साथ लेकर यह आज मेरे घर पधारे हैं। इन्होंने मुझे त्रिदेवा के भयंकर कर्मकांडों के फँद से छुड़ा कर मेरी आत्म को निर्मल करके मुझे अपने चरणों में बिठाया है। मैंने या मेरी मंझली रानी ने जो भी पाँवड़ा किया है उसमें कुछ भी अनुचित नहीं है। मैं अपने इस प्राण पिया पर वारी वारी जाती हूँ। यहीं भाव लेकर मैंने इन्हें यहाँ सिघाँसन पर विराजमान किया है।''

''एही टीका एही पाँवडो,एही निछावर आए।
श्री प्राणनाथ के चरण पर ,छता बलि बलि जाए।।''

आज से पहले भी श्रीजी का तिलक पूजन होता था,;; मगर अकेले का;;। श्री छत्रसाल जी पहले ऐसे मोमिन थे जिन्होंने इस जागनी के ब्रह्माँड में श्री युगल स्वरुप का तिलक कर उनकी आरती उतारी थी। श्री छत्रसाल जी ने ऐलान किया कि हे श्री जी! आपको जो धाम धनी के बिना अपना प्रभु या

महाप्रभु कहता है तो वह निश्चय ही परमधाम की अंगना नही है, और आपको कोई सन्त, कवि या वैरागी के रुप में देखता है तो वोह कोरा जीव है।

''श्री ठकुरानी जी साथ संग ले , पधारे मेरे घर ।
धनी बिना तुम्हें और देखे ,सो नही मिसल मातवर।।''

श्री युगलसरुप की पहचान सबको बताने के कारण ही, यहीं छत्रसाल जी को श्री जी ने अमीरुल मोमिन होने का खिताब दिया। यहीं पर श्री गुरु नानक देव जी की वाणी भी सिद्ध हुई कि

''बीतेगा उनतालिसा दगेगा चालिसा,तब कोई होसी मरद मरद का चेला।
नानक गुरु दिखावे सांई,सच सच दी बेला।।''

यहीं पर श्री प्राणनाथ जी ने छत्रसाल जी के हाथ अपना हुक्म देकर सत्य धर्म दीने इस्लाम श्री निजानन्द सम्प्रादाय चलाने का आदेश दिया।

''विजिया अभिनन्द बुद्धजी,इम स्ष्टि सिरदार।
हाथ हुकम छत्रसाल के,दियो सो अपनो राज।।''

राजतिलक

ज्येष्ठ शुक्ल तृतिया, बुधवार वि सं 1740 को यहीं चौपड़ा की हवेली में श्री प्राणनाथ जी ने छत्रसाल जी के हाथ से थाली लेकर उनके माथे पर तिलक लगा कर ,उन्हें ''महाराजा'' की शोभा प्रदान कर उनका राजतिलक किया और उन्हें बुन्देलखंड का राजा घोषित किया। सब तरफ श्री छत्रसाल जी के जयकारे लगने लगे। मगर महाराजा घोषित होने के बावजूद भी छत्रसाल जी ने बाद में जितने भी राजकीय कार्य व्यवहार किए या पत्र लिखे उसमें अपने आप को दीवान करके ही लिखा। क्योंकि वोह श्री प्राणनाथ जी को ही बुन्देलखंड का महाराजा मानते थे। छत्रसाल जी जब भी श्री प्राणनाथ जी को अपने घर पर लाते तो पालकी को एक तरफ स्वयं और दूसरी तरफ महारानीयाँ अपने कंधों पर उठाकर लाती थी। छत्रसाल जी श्री प्राणनाथ जी, श्री बाईजूराज जी और सब सुन्दरसाथ की खूब निर्मल भाव से सेवा करते

थे। श्री जी ने भी सबकी आत्म को वाणी चर्चा सुनाकर ईमान का इतना पक्का बना दिया था कि कोई भी उन्हें डिगा न सके। सब सुन्दरसाथ की सेवा के लिए श्री प्राणनाथ जी ने छत्रसाल जी को वरदान दिया कि हे छत्ता! कल सूर्योदय से पहले अपना घोड़ा जहाँ तक दौड़ा सकता है,दौड़ाना शुरु कर देना, और सूर्यास्त से पहले वापिस यहीं आ जाना। जहाँ जहाँ घोड़े के पैर पड़ेंगे, वोह धरती वक्त आखिरत तक हीरा उगलेगी। इसी से तुम सब सुन्दरसाथ की सेवा करना और ऐसा ही हुआ। आज भी भारत में हीरों की खान के लिए पन्ना का नाम आता है।

कुरान की हकीकत लेकर औरंगजेब को ललकारना

एक दिन श्री बंग्ला जी की परिकरमा में विराजमान स्वामी जी के सन्मुख लालदास जी कुरान पड़ रहे थे और स्वामी जी समझा रहे थे। तभी वहाँ अपने राजकीय कार्यों से समय निकाल कर छत्रसाल जी भी आ गए। वे आकर बाहर ही खड़े हो गए। तब स्वामी जी ने उन्हें अन्दर बुलाया और कुरान की सारी बात हकीकत बताई कि कुरान के अन्दर सारी अपनी ही हकीकत लिखी हुई है। श्री देवचन्द्र जी का, हमारा और आपका नाम भी इशारे में लिखा हुआ है। जिस दिन जो भी घटनाएँ हम तीनों के जीवन में घटित हुई ,वह सब भी इस कुरान में लिखी हैं। कुरान के छिपे भेदों के रहस्यों को और जागनी लीला की महिमा सुनकर महाराजा छत्रसाल जी को आवेश आ गया। उन्होंने निश्चय कर लिया कि कुरान की इस महत्वपूर्ण बात को लेकर दुनिया में हिन्दुओं और मुसलमानों को श्री प्राणनाथ जी के एक झण्डे के तले दीने इस्लाम श्री निजानन्द सम्प्रदाय में लाना अब कुछ भी कठिन नहीं हैं। महाराजा छत्रसाल जी की ऐसी महान बातें सुनकर श्री प्राणनाथ जी बहुत प्रसन्न हुए। सत्य धर्म दीने हकीकी श्री निजानन्द सम्प्रदाय को सब जगह फैलाने की भावना के कारण श्री जी ने बड़ा कयामतनामा वाणी को महाराजा छत्रसाल जी के नाम से जाहिर किया।

सम्वत् 1743 में श्री प्राणनाथ जी को हाथी पर बिठा कर ,आगे आगे छत्रसाल जी सेना लेकर चल पड़े। यह सारा लश्कर धर्म युद्ध के लिए निकल पड़ा। जो भी राजा रास्ते में आया शास्त्रार्थ के आधार पर श्री प्राणनाथ जी की पहचान करवाई और उसके राज्य को अपने राज्य में मिला

लिया। यदि कोई मुसलमान भी मिला तो उसे श्री प्राणनाथ जी की पहचान ईमाम मेंहदी के रुप में करवाकर उसके हाथ से खत लिखवा कर औंरगजेब को भेजते गए। सारे काजी मुल्ला लोगों ने महजरनामा लिख कर दिया कि क्यामत के जाहिर होने के समय आने वाले आखिरुलजमा ईमाम मेंहदी स्वरुप एक श्री प्राणनाथ जी ही हैं। ये सारे लिखित प्रमाण बादशाह औंरंगजेब के पास पहुँचाए गए। सारे पत्र पढ़ कर औरंगजेब ने शर्म के मारे सिर तो झुका लिया पर उसके दिल का गरुर दूर नही हुआ।

''सो पहुँचाया सरे तोरे को,कानों सुन्या सुलतान।
सुनके सिर नीचा किया,छूटा नही गुमान।।''

इन पत्रों में क्यामत के समय प्रगट होने वाले सात निशानों की भी व्याख्या की गई थी। औरंगजेब को महाराजा छत्रसाल जी का ख़ौफ खा गया और उसने बुन्देलखंड पर हो रहे आक्रमणों को रोक दिया। मगर फिर भी धर्म युद्ध के दौरान कुछ राजाओं ने अपना सिर उठाया,पर छत्रसाल जी उन्हें परास्त करते हुए आगे निकल गए।

''जिनों जिनों जैसी करी,तिन सजा पाई तित।
जैसी जैसी जिनों करी ,ताए मारा उसी बखत।।''

दिग्विजयी यात्रा में महाराजा छत्रसाल जी को सम्पूर्ण सफलता मिली। महाराजा छत्रसाल जी स्वामी जी सहित पन्ना वापिस लौट आए। स्वामी जी ने वापिस आकर जो परमधाम के भेद सब सुन्दरसाथ को बताए ,बस सब सुन्दरसाथ और खुद छत्रसाल जी भी उसी में लीन होकर आनन्द उठाते रहे। मगर बाद में जो भी आक्रमण करने आया उसे मुँह की खानी पड़ी।

श्री छत्रसाल जी महाराज ने अपने जीवनकाल में 252 लडाईयाँ औरंगजेब के खिलाफ लड़ीं, और सब पर जीत हासिल की। उनके शासनकाल में जागनी अभियान का कार्य भी बड़े जोरों पर चला। सारे बुन्देलखंड में भी शान्ति और समृद्धि आयी। मगर इतिहास आज भी उनके धाम गमन के बारे में मौन है। आज भी हरेक सुन्दरसाथ के मन में महाराजा छत्रसाल जी की सेवा ,कुर्बानी और प्यार की झलक देखने को मिलती है। श्री गुम्मट साहिब जी में भी सुबह श्री राज जी का उठापन करने से पहले श्री

छत्रसाल जी का उठापन पहले कराया जाता है। और यहीं भाव दिल में होता है कि ''आईए छत्रसाल जी आप ही श्री राज जी को उठाईए और उनका सिनगार करें।'' धन्य हैं तब के सुन्दरसाथ जिन्होंने श्री प्राणनाथ जी के दर्शन के साथ साथ अमीरुल मोमिन श्री छत्रसाल जी के भी दर्शन किए होंगे। जब तक यह ब्रह्माँड खड़ा है ,तब तक और वापिस परमधाम जाकर भी श्री छत्रसाल जी के स्नेह, त्याग, कुर्बानी, ईमान, और इश्क के बारे में चर्चा होती रहेगी।

संग्रह– 1 श्री बीतक साहिब जी
2 युग प्रर्वतक महाराजा छत्रसाल जी।

''प्रणाम जी''

चरणरज
अनु लवली,अमृतसर